भारवि की साहित्यिक विशेषताएँ

भारवि प्रधानतः कलावादी कवि हैं। ये काव्य के बाह्यरूप पर अधिक बल देते हैं। ये अपने ('किरातार्जुनीय') महाकाव्य का प्रारम्भ 'श्रियः' शब्द से करते हैं। प्रत्येक सर्ग के सबसे अंत के पद्य में 'लक्ष्मी' शब्द व्यवहृत है। इसप्रकार उन्होंने इस महाकाव्य को मंगलरूप में सर्जित किया है। इस महाकाव्य के नायक अर्जुन धीरोदात्त श्रेणी के हैं। वीररसप्रमुख है। श्रृंगार रस अङ्ग के रूप में आया है। इस महाकाव्य के प्रथम तीन सर्ग राजनीतिशास्त्र तथा कूटनीति की दृष्टि से अत्यन्त वरेण्य है। केवल 15वें सर्ग में चित्रकाव्य का वर्णन है। चित्रकाव्य के सर्वप्रथम प्रयोग का श्रेय भारवि को प्राप्त है। उन्होंने काव्य में ऐसी भाषा का प्रयोग किया जो नैसर्गिक नहीं है। इसप्रकार से उन्होंने अपने काव्य को क्लिष्ट बनाया।

भारवि की काव्यशैली सामान्यरूप से वैदर्भी है। इसमें अल्पसमास है। किन्तु भारवि की शैली में कालिदास के समान कोमलता, पदलालित्य तथा परिष्कार का अभाव है। भारवि शब्दों के लावण्य का परित्यागकर भावों की सुन्दरता पर बल देते हैं। भारवि की भावाशैली अपनी क्लिष्टता का परित्याग नहीं करती। इसीकारण मल्लिनाथ ने इनकी शैली को 'नारिकेलफलसम्मित' की उपमा दी है। आशय है नारियल ऊपर से कठोर होता है, उसके फल और सारूप को बाहर से नहीं जानाजासकता। यही बात भारवि के काव्य के भावाशैली (बाह्यप्रकार से) में अभिव्यक्त है। नारियल के (ऊपरी) ऊपरी कवच को हटाकर भावों की मधुरता का अवलोकन करने पर मन संतुष्ट होता है। उदाहरणस्वरूप– द्रौपदी के प्रेरणादायी सम्भाषण में कवि आन्तरिक तथा बाह्यप्रभाव को अभिव्यक्त करने में सफल सिद्ध हुए हैं।

"वनान्तशय्याकठिनीकृताकृती कचाचितौ विष्वगिवागजौ गजौ।
कथं त्वमेतौ धृतिसंयमौ यमौ विलोकयन्नुत्सहसे न बाधितुम्॥" (किरात 1/36)

शब्दों में यमक (अगजौ-पर्वतीय, गजौ-दो हाथी, अन्य…) का अनुप्रयोग तथा युधिष्ठिर को आक्षेप – ये दोनों भाव इसमें निहित हैं। इसमें द्रौपदी कहती हैं कि (युधिष्ठिर) आप इन दोनों भाइयों (नकुल-सहदेव) के दुर्दिन का अवलोकन करके भी धैर्य तथा संयम का परित्याग नहीं करते – यह विचारणीय तथ्य है। आक्षेप की परिणति में द्रौपदी युधिष्ठिर को वन में भसकार्य में समय व्यतीत करने को कहती है।

"अथ क्षमामेव निरस्तविक्रमश्चिराय पर्येषि सुखस्य साधनम्।
विहाय लक्ष्मीपतिलक्ष्मकार्मुकं जटाधरः सञ्जुहुधीह पावकम्॥"
(किरात 1/44)

Scanned by CamScanner

भारवि अपने इस महाकाव्य 'किरातार्जुनीय' में चरित्र के अनुसार ओज तथा शम गुण का विधान करते हैं। यथा - द्रौपदी तथा भीम के परस्पर सम्भाषण में ओज का और (ख) युधिष्ठिर तथा व्यास के परस्पर वाक् (वाणी) में शान्ति का निरूपण है।

इस महाकाव्य के पञ्चम सर्ग में एक विख्यात उपमा का वर्णन प्राप्त होता है। इसमें यक्ष अर्जुन को प्रतिपादित करता है कि स्थलकमलों के पराग वायु के तीव्र वेग (=चक्रवात) द्वारा इसप्रकार गतिशील होते हैं कि आकाश गोलाकार रूप धारण कर लेता है। इसकी शोभा स्वर्णिम छत्र के समान दीखती है।

"उत्फुल्ल-स्थल-नलिनी-वनादमुष्मादुद्धूतः सरसिज-सम्भवः परागः।
वात्याभिर्वियति विवर्तितः समन्तादाधत्ते कनकमयातपत्र-लक्ष्मीम् ॥"
(किरात॰ 5/39)

कवि को 'आतपत्र भारवि' की पहचान उस उपमान से मिली।

भारवि प्रयत्नों द्वारा अलङ्कार प्रस्तुत करते हैं, वे शब्दालङ्कार हैं जो चित्रकाव्य के रूप में पन्द्रहवें सर्ग में वर्णित हैं। यथा - 15वें सर्ग में एक पद्य में चारों चरण एक समान रूप से आते हैं -
"विकाशमीयुर्जगतीशमार्गणाः (पद्य किरात॰ 15/52) के चार अर्थ इसप्रकार से हमारे समक्ष अभिव्यक्त होते हैं -

(1) जगतीश-मार्गणाः विकाशम् ईयुः = पृथ्वी के अधिपति अर्जुन के बाण विस्तारित हुए।

(2) जगतीशमार्गणाः विकाशम् ईयुः = संसार में शिव के बाण वि-काश (खराब वेग) को प्राप्त किए अर्थात् विघटित हो गए।

(3) जगती-श-मार-गणाः विकाशम् ईयुः = संसार को क्लेश देनेवाले दानवों को मारनेवाले शिवगण (संतुष्ट) प्रसन्न हुए।

(4) जगतीश-मार्गणाः वि-काशम् ईयुः = संसार के अधिपति शिव को खोजनेवाले देवादिगण पक्षियों के स्थल पर अर्थात् नभ (आकाश) में व्याप्त हो गए।

इसप्रकार भारवि ने चित्रालङ्कार का प्रयोग कर संस्कृत भाषा के विविध अर्थों को धारण करने की क्षमता का प्रकाशन किया है। व्याकरण का इसमें विपुल योगदान है।

Scanned by CamScanner

भारवि का अर्थगौरव

भारवि की वाणी की विशेषताओं के संदर्भ में हमारे समक्ष अनेक सूक्तियाँ अभिव्यक्त होती हैं। यथा –
भारवेरर्थगौरवम् , भारवेरिव भारवेः , प्रकृतिमधुरा भारविगिरः (अभिनन्द), नारिकेलफलसम्मितं वचो भारवेः (मल्लिनाथ) आदि ।

भारवि की सूक्तियों में नीति , राजनीति तथा सामान्य जीवन का अपूर्व वर्णन प्राप्त होता है। इनसबमें अर्थान्तरन्यास अलंकार (जहाँ विशेष द्वारा सामान्य का, सामान्य द्वारा विशेष का, कारण द्वारा कार्य का तथा कार्य द्वारा कारण का समर्थन किया जाय वहाँ अर्थान्तरन्यास होता है) विद्यमान है। इन सूक्तियों में अर्थगौरव का महत्व प्राप्त होता है। इसीकारण मनीषियों द्वारा कहा गया – 'भारवेरर्थगौरवम्'। अर्थगौरव एक काव्यगुण के रूप में है जो कम से कम शब्दों में बृहत् अर्थ को अभिव्यक्त करने की क्षमता रखता है।

कवि 'किरातार्जुनीय' के प्रथम सर्ग में वनेचर की वाणी के रूप में अर्थगौरव को अभिव्यक्त करते हैं।

(क) " स सौष्ठवौदार्यविशेषशालिनीं विनिश्चितार्थामिति वाचमाददे।"
(किरात० 1/3)

वनेचर की वाणी –(क) मधुर शब्दों से अनुकूल, (ख) अर्थ की गम्भीरता से युक्त तथा (ग) प्रामाणिक शब्दों से विभूषित रहती है।

भीम के वाक् की प्रशंसा में युधिष्ठिर का कथन है कि तुम्हारे शब्दों में स्पष्टता है, अर्थ का विस्तार है, पुनरावृत्ति का अभाव है तथा शब्दों में आपस में सामर्थ्य विद्यमान है। भारवि ने भाषा के इन गुणों का समावेश अपनी संकल्प कृति के (द्वितीय सर्ग के 27वें श्लोक से) में किया है।

(ख) " स्फुटता न पदैरपाकृता , न च न स्वीकृतमर्थगौरवम् ।
रचिता पृथगर्थता गिरां , न च सामर्थ्यमपोहितं क्वचित् ।।"
(किरात० 2/27)

(ग) " अतोऽर्हसि क्षन्तुमसाधु साधु वा हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः ।।"
(किरात० 1/4)
वनेचर की उक्ति राजा युधिष्ठिर को लक्ष्यकर कही गई है। आशय है – ऐसी बोली विरल है जो हितकारी होने के साथ-साथ मन को भी संतुष्ट करे।

(घ) " समुन्नयन् भूतिमनार्यसंगमाद् वरं विरोधोऽपि समं महात्मभिः ।।"
वनेचर की उक्ति युधिष्ठिर के प्रति है। आशय है कि महापुरुषों के साथ विरोध, दुष्टों के साथ से श्रेष्ठ होता है। दुर्योधन इसी विचारधारा को मानकर पाण्डवों के साथ वैरभाव में संलग्न रहते हैं।

Scanned by CamScanner

(ङ) "(अहो-दुरन्ता बलवद्विरोधिता)   (बलवद्विरोधिता)
स चिन्तयत्येव भियस्त्वदेष्यतीः रहो दुरन्ता बलवद्विरोधिता॥ (किरात॰ 1/23)
शक्तिशालीजनों से शत्रुता का परिणाम दुःखद होता है।

(च) वसन्ति हि प्रेम्णि गुणा न वस्तुनि।(8/37) (किरात॰)
प्रेम में गुणों का वास होता है, किसी भौतिकवस्तु में गुण नहीं विद्यमान होते।

(छ) आपातरम्या विषयाः पर्यन्तपरितापिनः।(11/12)(किरात॰)
इन्द्रियों का विषय के साथ मिलन होने पर आनन्द की प्राप्ति होती है, किन्तु विषय के मिलन के पश्चात विषाद की प्राप्ति होती है।

(ज) सुलभा रम्यता लोके दुर्लभं हि गुणार्जनम्।(11/11)(किरात॰)
संसार में सौन्दर्य को प्राप्त करना सहज तथा सरल है किन्तु गुणों को प्राप्त करलेना एक विरलाकार्य (कठिन कार्य) है।

(झ) "सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदम्।
वृणुते हि विमृश्यकारिणं गुणलुब्धाः स्वयमेव सम्पदः॥"
किसी कार्य को बिना चिन्तन-अवलोकन किए हुए अनायास नहीं करना चाहिए। चिन्तन के अभाव से किए गए कार्य क्लेश को उत्पन्न करते हैं।

(ञ) वस्तुमिच्छति निरापदि सर्वः।(9/16)(किरात॰)
समस्तजन भयरहित स्थल पर निवास करना चाहते हैं।
राजनीति से सम्बद्ध सूक्तियाँ भी विचारणीय हैं—

(ट) "अवन्ध्यकोपस्य विहन्तुरापदां भवन्ति वश्याः स्वयमेव देहिनः।
अमर्षशून्येन जनस्य जन्तुना न जातहार्देन न विद्विषादरः॥" (किरात॰1/33)
कोपरहित मानव के साथ अनुराग होने पर भी लोग उनका आदर नहीं करते। वैरभाव से युक्त शठलोग भी ऐसे लोगों से भयभीत नहीं होते।

किराता॰ के प्रथम सर्ग से द्रौपदी के कुछ वचनों का उल्लेख किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ-(1) संस्कृत साहित्य का इतिहास (पृ॰सं॰ 243-251)- डा॰ उमाशंकर शर्मा 'ऋषि' (चौखम्भा)
(2) 'किरातार्जुनीयम्' (प्रथमसर्ग) - डा॰ सावित्री गुप्ता (विद्यानिधि प्रकाशन, दिल्ली)

Scanned by CamScanner